हज़रत मुहम्मद (सल्ल०)

की

बेटियाँ

तालिब हाशिमी

अनुवाद

नुज़हत यासमीन

विषय-सूची

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

(अल्लाह के नाम से जो बड़ा ही मेहरबान और रहम करनेवाला है)

दो शब्द

तालिब हाशिमी इस्लामी लिट्रेचर की दुनिया में अपनी ख़ास पहचान रखते हैं। उनकी उर्दू में प्रकाशित पुस्तक "तज़कारे-सहाबियात" में दो सौ से भी ज़्यादा सहाबियात (रज़ि०) के हालात बड़ी ख़ूबी के साथ दर्ज किए गए हैं। तालिब हाशिमी साहब ने तफ़सील के साथ सहाबियात की ज़िन्दगियों और शख़्सियतों की जीती जागती तस्वीर पेश की है। इस तफ़सील के बग़ैर किसी के किरदार की सही तस्वीर पेश करना मुश्किल होता है। तालिब साहब की किताबों को पढ़ने के बाद उनकी सलाहियतों का अंदाज़ा आसानी से लगाया जा सकता है।

तालिब हाशिमी एक सच्चे मोमिन हैं। मज़हब से उन्हें फ़ितरी लगाव है। तालिब साहब ने अपनी अदबी सलाहियतों को सहाबा किराम (रज़ि०) और सहाबियात (रज़ि०) की ज़िन्दगी के हर पहलू को उजागर करने में लगा दिया है ताकि उनके भूले हुए कारनामें लोगों के सामने आ सकें। इस वक़्त जो किताब "हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की बेटियाँ" आपके हाथों में है यह "तज़कारे-सहाबियात" के एक हिस्से का हिन्दी तर्जमा है। जिसको तैयार करते वक़्त हिन्दी पढ़नेवालों की ज़रूरत का ध्यान रखते हुए संक्षिप्त रूप में पेश किया गया है। दरअसल हिन्दी में इस तरह की किताबों की बहुत कमी है और उर्दू न जाननेवाले इस तरह की अहम किताबों से महरूम रह

जाते हैं। इसी कमी को दूर करने के लिए यह किताब हिन्दी में तैयार की गई है ताकि ज़्यादा से ज़्यादा लोग इससे फ़ायदा हासिल कर सकें।

"तज़कारे-सहाबियात" एक मोटी किताब है इस लिए इस किताब को और ज़्यादा फ़ायदेमन्द बनाने के लिए इसका हिन्दी तर्जमा कई हिस्सों में अलग-अलग किताबों की शक्ल में पेश किया जा रहा है। यह किताब "हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की बेटियाँ" भी इसी सिलसिले की एक कड़ी है। इससे पहले एक किताब "प्यारे नबी (सल्ल०) की पाक बीवियाँ" के नाम से पहले ही प्रकाशित हो चुकी है।

हमें उम्मीद है कि यह किताब लोगों के लिए फ़ायदेमंद साबित होगी। अगर आपको इस किताब में कोई ग़लती नज़र आती है या आप कोई सलाह देना चाहें तो हम आपके एहसानमंद होंगे। ख़ुदा हमारी इस कोशिश को क़बूल फ़रमाए। आमीन

— नसीम ग़ाज़ी
फ़लाही
सेक्रेट्री
इस्लामी सहित्य ट्रस्ट
(दिल्ली)

हज़रत ज़ैनब-बिन्ते-रसूलुल्लाह (सल्ल०)

(1)

नाम ज़ैनब था। नबी (सल्ल०) की सबसे बड़ी बेटी थीं। माँ हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) थीं। हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) नुबूवत से दस साल पहले मक्का में पैदा हुईं। नबी (सल्ल०) की उम्र उस वक़्त तीस साल थी।

हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) की शादी नुबूवत से पहले कम उम्र में ही उनकी ख़ाला के बेटे अबुल-आस (रज़ि०) से हो गई थी जिनका नाम उस वक़्त लक़ीत-बिन-रबीअ था।

जब नबी (सल्ल०) को अल्लाह ने अपना नबी बनाया तो हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) फ़ौरन ईमान ले आईं।

नुबूवत के बाद मक्का के इस्लाम दुश्मनों ने नबी (सल्ल०) और मुसलमानों पर बेपनाह ज़ुल्म ढाने शुरू कर दिए। नबी (सल्ल०) की दो बेटियाँ रुक़य्या (रज़ि०) और उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) का निकाह अबू-लहब के दो बेटों से हुआ था। अभी उनकी विदाई नहीं हुई थी। उन दोनों ने अपने बाप के कहने पर नबी (सल्ल०) की बेटियों को तलाक़ दे दी।

अबुल-आस (रज़ि०) को भी इस्लाम दुश्मनों ने बहुत उकसाया कि वे ज़ैनब (रज़ि०) को तलाक़ दे दें, लेकिन उन्होंने साफ़ इनकार कर दिया और हज़रत ज़ैनब से अच्छा सुलूक करते रहे। नबी (सल्ल०) ने अबुल-आस (रज़ि०) के इस अख़लाक़ की हमेशा तारीफ़ की। लेकिन इस नेकी और शराफ़त के बावुजूद अबुल-आस ने अपने पुराने दीन को नहीं छोड़ा। जब नबी (सल्ल०) हिजरत करके मदीना तशरीफ़ ले गए उस वक़्त हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) अपने ससुराल में थीं।

(2)

सन् 2 हिजरी, रमज़ान के महीने में इस्लाम और हक़ के इनकारियों के बीच पहली लड़ाई बद्र के मैदान में हुई। इसमें मुसलमानों की जीत हुई और क़ुरैश के बहुत-से आदमी गिरफ्तार हुए। उनमें अबुल-आस (रज़ि०) भी थे। उन्हें एक अंसारी सहाबी अब्दुल्लाह-बिन-जुबैर (रज़ि०) ने क़ैद किया। मक्कावालों ने जब इन गिरफ्तारियों की ख़बर सुनी तो अपने-अपने रिश्तेदारों को क़ैद से छुड़ाने के लिए फ़िदये की रक़म भेजी। ज़ैनब (रज़ि०) ने भी अपने शौहर की रिहाई के लिए यमनी अक़ीक़ (लाल रंग के एक क़ीमती पत्थर) का एक हार अपने देवर अम्र-बिन रबीअ के हाथों भेजा। यह हार ज़ैनब (रज़ि०) को उनकी माँ हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) ने शादी के वक्त दिया था। जब नबी (सल्ल०) के सामने यह हार पेश किया गया तो हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) याद आ गईं और आप (सल्ल०) की आखों में आँसू आ गए।

नबी (सल्ल०) ने सहाबियों (रज़ि०) से फ़रमाया, “अगर मुनासिब समझो तो यह हार ज़ैनब को वापस भेज दो। यह उसकी माँ की निशानी है। अबुल-आस का फ़िदया सिर्फ़ यह है कि वे मक्का जाकर ज़ैनब को फ़ौरन मदीना भेज दें।” सभी ने नबी (सल्ल०) की इस बात को मान लिया। अबुल-आस (रज़ि०) ने भी यह शर्त क़बूल कर ली और रिहा होकर मक्का पहुँचे। नबी (सल्ल०) ने उनके साथ हज़रत ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि०) को भेजा कि वे ‘बत्न’ या ‘जज’ नामी जगह पर रुक कर इन्तिज़ार करें, और जब हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) मक्का से वहाँ पहुँचें तो उन्हें अपने साथ लेकर मदीना आ जाएँ।

हज़रत अबुल-आस (रज़ि०) ने वादे के मुताबिक़ अपने छोटे भाई किनाना के साथ हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) को मक्का से मदीना की तरफ़ भेजा। जब मक्का के इस्लाम दुश्मनों को यह ख़बर मिली कि नबी (सल्ल०) की बेटी मदीना जा रही है तो उन्होंने किनाना-बिन-रबीअ् और

हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) का पीछा किया और "ज़ी-तुवा" नामी मक़ाम पर उन्हें घेर लिया। हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) ऊँट पर सवार थीं। हब्बार-बिन-असवद नाम के एक इस्लाम दुश्मन ने हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) को अपने नेज़े (बरछी) से ज़मीन पर गिरा दिया। वे उस वक़्त गर्भवती थीं। सख़्त चोट आई और हमल (गर्भ) गिर गया। किनाना-बिन-रबीअ् ग़ुस्से से भड़क उठे। अपने तीर निकाले और उन्हें तरकश पर चढ़ाकर ललकारा, "ख़बरदार! अब अगर तुममें से कोई आगे बढ़ा तो मैं उसे तीरों से छलनी कर दूँगा!" इस्लाम दुश्मन रुक गए। उनमें अबू-सुफ़ियान (रज़ि०) भी शामिल थे। उन्होंने कहा, "भतीजे अपने तीर रोक लो, मैं तुमसे कुछ बात करना चाहता हूँ।" किनाना ने कहा, "कहो, क्या कहना चाहते हो?" अबू-सुफ़ियान (रज़ि०) ने उनके कान में कहा, "मुहम्मद के हाथों हमें जिस बदनामी और बेइज़्ज़ती का सामना करना पड़ा है तुम उसे ख़ूब जानते हो। अगर तुम उसकी बेटी को इस तरह खुल्लम-खुल्ला हमारे सामने ले जाओगे तो हमारा बड़ा अपमान होगा। अच्छा होगा कि इस वक़्त तुम ज़ैनब के साथ मक्का लौट जाओ और फिर किसी वक़्त छुपकर ज़ैनब को ले जाना।" किनाना ने यह बात मान ली और हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) को लेकर मक्का आ गए। कुछ दिनों के बाद वे रात के वक़्त चुपके से हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) को साथ लेकर 'बत्न' या 'जज' नामी जगह पर पहुँचे और उन्हें हज़रत ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि०) के सुपुर्द करके मक्का वापस आ गए। हज़रत ज़ैद (रज़ि०) हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) को साथ लेकर मदीना पहुँच गए।

(3)

हज़रत अबुल-आस (रज़ि०) को हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) से बहुत मुहब्बत थी। ज़ैनब (रज़ि०) के चले जाने के बाद वे बहुत बेचैन रहने लगे। एक बार जब वे सीरिया (शाम) की तरफ़ सफ़र कर रहे थे तो दर्द भरी आवाज़ में ये अशआर पढ़ रहे थे जिसका तर्जमा इस तरह है—

"जब मैं हरम के मक़ाम से गुज़रा तो ज़ैनब को याद किया और कहा कि ख़ुदा उस शख़्स को शादाब रखे जो हरम में मुक़ीम है, अमीन की लड़की को ख़ुदा अच्छा बदला दे, और हर शौहर उसी बात की तारीफ़ करता है जिसको वह ख़ूब जानता है।

हज़रत अबुल-आस (रज़ि०) बड़े शरीफ़ और ईमानदार थे। लोग उनके पास अपनी अमानतें रखते और वे बड़ी ईमानदारी से उनकी हिफ़ाज़त करते और मालिकों के माँगने पर फ़ौरन वापस कर देते। मक्का में उनकी अपनी साख थी कि लोग अपने कारोबार का माल उन्हें देकर बेचने के लिए दूसरे मुल्कों में भेजा करते थे।

सन् 6 हिजरी में अबुल-आस (रज़ि०) एक कारोबारी क़ाफ़िले के साथ सीरिया जा रहे थे। 'ऐस' नामी जगह पर मुसलमानों ने कुरैश के क़ाफ़िले पर छापा मारा और सारे कारोबारी सामान और माल पर क़ब्ज़ा कर लिया। अबुल-आस (रज़ि०) भागकर मदीना चले गए। दूसरे दुश्मन गिरफ्तार कर लिए गए। अबुल-आस (रज़ि०) ने मदीना पहुँचकर हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) की पनाह ली। हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) ने नबी (सल्ल०) से सिफ़ारिश की कि अबुल-आस (रज़ि०) का माल उन्हें वापस कर दिया जाए। चूँकि अबुल-आस (रज़ि०) ने हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) से हमेशा अच्छा सुलूक किया था इसलिए आप (सल्ल०) उनका लिहाज़ करते थे। नबी (सल्ल०) ने सहाबियों (रज़ि०) से फ़रमाया, "अगर तुम अबुल-आस का माल वापस कर दोगे तो मैं तुम्हारा एहसान मानूँगा।"

सहाबा (रज़ि०) तो हर वक़्त नबी (सल्ल०) की ख़ुशी चाहते थे। फ़ौरन सारा सामान अबुल-आस (रज़ि०) को वापस कर दिया। वे माल और सामान लेकर मक्का पहुँचे और लोगों की अमानतें उन्हें वापस कर दीं। फिर मक्कावालों से पूछा, "ऐ मक्कावालो, अब मेरे पास किसी की कोई अमानत तो नहीं है?" तमाम मक्कावालों ने कहा, "बिल्कुल नहीं, अल्लाह तुम्हें अच्छा बदला दे, तुम नेक और शरीफ़ आदमी हो।"

हज़रत अबुल-आस (रज़ि०) ने कहा, "तो सुन लो कि मैं मुसलमान होता हूँ। खुदा की क़सम, इस्लाम क़बूल करने से मैं सिर्फ़ इसलिए रुका था कि कहीं तुम लोग मुझे बेईमान न समझो। यह कहकर कलिम-ए-शहादत पढ़ा और हिजरत करके मदीना आ गए। यह वाक़िआ सन् 7 हिजरी, मुहर्रम के महीने का है।

(4)

हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) और हज़रत अबुल-आस (रज़ि०) में शिर्क की वजह से जुदाई हो गई थी इसलिए जब हज़रत अबुल-आस (रज़ि०) इस्लाम क़बूल करके मदीना आए तो नबी (सल्ल०) ने हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) का दोबारा निकाह पिछले ही महर पर करके उन्हें अबुल-आस (रज़ि०) के घर भेज दिया।

हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) इस वाक़िए के बाद ज़्यादा दिनों तक ज़िन्दा न रह सकीं। सन् 8 हिजरी में उनका इन्तिक़ाल हो गया। इसकी वजह हमल गिरने की वह तकलीफ़ थी, जो मक्का से आते हुए "ज़ी-तुवा' नामी मक़ाम पर हुई थी।

हज़रत उम्मे-ऐमन (रज़ि०), हज़रत सौदा (रज़ि०) और हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि०) ने नबी (सल्ल०) की हिदायत के मुताबिक़ मय्यत को ग़ुस्ल दिया। जब ग़ुस्ल दे चुकीं तो नबी (सल्ल०) को ख़बर की। आप (सल्ल०) ने अपना तहबन्द दिया और कहा कि इसे कफ़न के अन्दर पहना दो।

सहीह बुख़ारी में मशहूर सहाबिया उम्मे-अतीया (रज़ि०) फ़रमाती हैं कि मैं भी ज़ैनब-बिन्ते-रसूलुल्लाह के ग़ुस्ल में शरीक थी। ग़ुस्ल का तरीक़ा नबी (सल्ल०) बताते जाते थे। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "पहले जिस्म को तीन बार या पाँच बार ग़ुस्ल दो और उसके बाद फिर काफ़ूर लगाओ।" एक और रिवायत में है कि नबी (सल्ल०) ने हज़रत

उम्मे-अतीया (रज़ि०) से फ़रमाया, "ऐ उम्मे-अतीया, मेरी बेटी को अच्छी तरह कफ़न में लपेटना, उसके बालों की तीन चोटियाँ बनाना और उसे बेहतरीन ख़ुशबू में बसाना।" जनाज़े की नमाज़ नबी (सल्ल०) ने ख़ुद पढ़ाई और हज़रत अबुल-आस (रज़ि०) ने क़ब्र में उतारा। एक रिवायत में है कि नबी (सल्ल०) ख़ुद भी क़ब्र में उतरे।

जिस दिन हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) का इन्तिक़ाल हुआ नबी (सल्ल०) बहुत उदास थे। नबी (सल्ल०) की आँखों से आँसू बह रहे थे और आप (सल्ल०) फ़रमा रहे थे, "ज़ैनब मेरी सबसे अच्छी लड़की थी, जो मेरी मुहब्बत में सताई गई।"

हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) के दो बच्चे थे, एक लड़का अली और एक लड़की उमामा। एक रिवायत के मुताबिक़ मक्का की जीत के मौक़े पर अली-बिन-अबुल- आस (रज़ि०) नबी (सल्ल०) के पास ऊँट पर सवार थे। दूसरी रिवायत के मुताबिक़ वे यरमूक की लड़ाई में शहीद हुए। तीसरी रिवायत के मुताबिक़ उनका इन्तिक़ाल बचपन में ही हो गया था।

हज़रत अबुल-आस (रज़ि०) भी कुछ ही मुद्दत के बाद इन्तिक़ाल कर गए। इन्तिक़ाल से पहले उन्होंने अपनी बेटी उमामा (रज़ि०) को अपने ममेरे भाई ज़ुबैर-बिन-अव्वाम (रज़ि०) की सरपरस्ती में दे दिया था। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के इन्तिक़ाल के बाद ज़ुबैर (रज़ि०) ने उमामा (रज़ि०) का निकाह हज़रत अली (रज़ि०) से कर दिया।

हज़रत रुक़ैया-बिन्ते-रसूलुल्लाह (सल्ल०)

(1)

नाम रुक़ैया था। ये नबी (सल्ल०) की दूसरी बेटी थीं। माँ हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) थीं। हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) नुबूवत से सात साल पहले पैदा हुईं। नबी (सल्ल०) की उम्र उस वक़्त तैंतीस साल थी। हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) से तीन साल छोटी थीं। उनका पहला निकाह उनके चचेरे भाई उत्बा-बिन-अबू-लहब से हुआ था। जब सूरा "तब्बत यदा अबी लहब" (टूट गए अबू लहब के हाथ) नाज़िल हुई तो उत्बा ने अपने बाप अबू-लहब के कहने पर हज़रत रुक़ैया को तलाक़ दे दी। हज़रत रुक़ैया की अभी विदाई नहीं हुई थी।

कुछ दिनों के बाद हज़रत उसमान-बिन-अफ़्फ़ान (रज़ि०) ने इस्लाम क़बूल कर लिया। वे बड़े नेक और शरीफ़ नौजवान थे। साथ ही वे धनी और दानशील भी थे। नबी (सल्ल०) ने उन्हें अपना दामाद चुन लिया। हज़रत उसमान (रज़ि०) की दिली तमन्ना भी यही थी। इसलिए नबी (सल्ल०) ने मक्का में ही हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) की शादी हज़रत उसमान (रज़ि०) से कर दी।

मक्का के इस्लाम दुश्मन जब मुसलमानों को बहुत सताने लगे तो नबी (सल्ल०) ने उन्हें हबशा हिजरत कर जाने की इजाज़त दे दी। हज़रत उसमान (रज़ि०) भी हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) के साथ हबशा को हिजरत कर गए। नबी (सल्ल०) को ख़बर हुई तो आप (सल्ल०) ने फ़रमाया—

> "इबराहीम (अलैहि०) और लूत (अलैहि०) के बाद उसमान पहले शख़्स हैं जिन्होंने अल्लाह की राह में अपनी बीवी के साथ हिजरत की है।"

कुछ मुद्दत के बाद हज़रत उसमान (रज़ि०) और हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) वापस मक्का तशरीफ़ ले आए लेकिन इस्लाम दुश्मनों का ज़ुल्म अब बहुत बढ़ चुका था। इसलिए दोबारा हबशा हिजरत कर गए। जब बहुत दिनों तक कोई ख़बर नहीं मिली तो नबी (सल्ल०) को बहुत फ़िक्र हुई। एक दिन किसी औरत ने आकर ख़बर दी कि मैंने उसमान (रज़ि०) और रुक़ैया (रज़ि०) को आँखों से हबशा में ख़ैरियत से देखा है। यह सुनकर नबी (सल्ल०) को इत्मीनान हुआ।

जब हबशा में रहते हुए काफ़ी दिन गुज़र गए तो एक दिन हज़रत उसमान (रज़ि०) को ख़बर मिली कि नबी (सल्ल०) हिजरत करके मदीना तशरीफ़ ले जानेवाले हैं तो यह सुनकर कुछ दूसरे मुसलमानों और हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) के साथ मक्का में पहुँचे। फिर कुछ दिन वहाँ गुज़ारकर नबी (सल्ल०) की इजाज़त से हज़रत रुक़ैया के साथ मदीना चले गए। वहाँ हज़रत औस-बिन-साबित (रज़ि०) के घर उतरे। कुछ मुद्दत के बाद नबी (सल्ल०) भी मदीना तशरीफ़ ले आए।

सन् 2 हिजरी में हज़रत रुक़ैया को चेचक निकली। उस वक़्त नबी (सल्ल०) बद्र जाने की तैयारी कर रहे थे। चलने से पहले आप (सल्ल०) ने हज़रत उसमान (रज़ि०) को हुक्म दिया कि वे हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) की देख-भाल के लिए मदीना ही में ठहरें। इसके बदले अल्लाह उन्हें जिहाद में शरीक होने का सवाब भी देगा और ग़नीमत के माल से भी उन्हें हिस्सा मिलेगा। हज़रत उसमान (रज़ि०) हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) के पास ही ठहर गए। नबी (सल्ल०) अभी बद्र ही में थे कि हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) की तकलीफ़ बढ़ गई और उनका इन्तिक़ाल हो गया। उस वक़्त उनकी उम्र इक्कीस साल थी। ठीक उस वक़्त जब क़ब्र पर मिट्टी डाली जा रही थी, हज़रत ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि०) बद्र की लड़ाई में मुसलमानों की जीत की ख़ुशख़बरी लेकर मदीना पहुँचे।

अपनी बेटी के इन्तिक़ाल की ख़बर सुनकर नबी (सल्ल०) को बहुत सदमा हुआ और आप (सल्ल०) की आँखों से आँसू बहने लगे। मदीना

वापस आकर नबी (सल्ल०) हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) की क़ब्र पर तशरीफ़ ले गए और फ़रमाया, “उसमान-बिन-मज़ऊन (रज़ि०) जा चुके, अब तुम भी उनसे जा मिलो।” (मुहाजिरों में उसमान-बिन-मज़ऊन पहले सहाबी थे जिनका मदीना आकर इन्तिक़ाल हुआ था।) नबी (सल्ल०) के यह फ़रमाने से औरतों में कुहराम मच गया। हज़रत उमर (रज़ि०) ने उन्हें मना किया। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, “उमर इन्हें रोने दो, दिल और आँख के रोने में कोई नुक़सान नहीं, मातम और विलाप से बचना चाहिए।” हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) भी अपनी बहन की क़ब्र पर तशरीफ़ लाईं और क़ब्र के किनारे बैठकर रोने लगीं। नबी (सल्ल०) अपनी मुबारक चादर से उनके आँसू पोंछते जाते थे।

हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) जब हबशा में थीं तब उनके यहाँ एक लड़का पैदा हुआ था, जिसका नाम अब्दुल्लाह रखा गया था। इसी बेटे के नाम की निस्बत से हज़रत उसमान (रज़ि०) ने अपनी कुन्नियत अबू-अब्दुल्लाह रखी थी।

अब्दुल्लाह की उम्र अभी छः साल थी कि एक मुर्गे ने उनकी आँख में चोंच मार दी जिससे सारा चेहरा सूज गया और इसी तकलीफ़ से सन् 4 हिजरी जुमादल-ऊला के महीने में उनका इन्तिक़ाल हो गया। नबी (सल्ल०) ने जनाज़े की नमाज़ पढ़ाई और हज़रत उसमान (रज़ि०) ने क़ब्र में उतारा।

हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) और हज़रत उसमान (रज़ि०) में बहुत मुहब्बत थी। उनके आपस के सम्बन्ध इतने ख़ुशगवार और मिसाली थे कि उनके बारे में लोगों में यह कहावत मशहूर हो गई थी–

“रुक़ैया और उसमान से बेहतर मियाँ-बीवी किसी इनसान ने नहीं देखे।”

हज़रत उम्मे-कुलसूम-बिन्ते-रसूलुल्लाह (सल्ल०)

नाम उम्मे-कुलसूम था। नबी (सल्ल०) की तीसरी बेटी थीं। माँ हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) थीं। सीरतनिगारों ने बयान किया है कि हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) नुबूवत से छः साल पहले पैदा हुईं। इनका निकाह नुबूवत से पहले उनके चचेरे भाई उतैबा-बिन-अबू-लहब से हुआ। जब हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) को अल्लाह ने अपना नबी बनाया और आप (सल्ल०) ने लोगों को इस्लाम की दावत देनी शुरू की तो अबू-लहब और उसकी बीवी नबी (सल्ल०) के दुश्मन हो गए। उन्होंने आप (सल्ल०) को सताने में कोई कसर न छोड़ी। फिर अल्लाह की ग़ैरत जोश में आई और सूरा "तब्बत यदा अबी लहब" (टूट गए अबू-लहब के हाथ) नाज़िल हुई। अबू-लहब को सख़्त ग़ुस्सा आया। उसके एक बेटे उत्बा का निकाह नबी (सल्ल०) की बेटी हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) से और दूसरे बेटे उतैबा का निकाह हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) से हुआ था। अभी दोनों बहनों की विदाई नहीं हुई थी। अबू-लहब ने अपने दोनों बेटों को बुलाया और उनसे कहा, "अगर तुमने उस (मुहम्मद) की बेटी को तलाक़ न दी तो मेरा तुम्हारे साथ उठना-बैठना हराम है।"

दोनों बेटों ने बाप के हुक्म को मान लिया। उत्बा ने रुक़ैया (रज़ि०) को और उतैबा ने उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) को तलाक़ दे दी।

तलाक़ के बाद हज़रत रुक़ैया (रज़ि०) का निकाह हज़रत उसमान (रज़ि०) से हुआ। निकाह के कुछ ही साल गुज़रे थे कि रुक़ैया (रज़ि०) का इन्तिक़ाल हो गया। उसमान (रज़ि०) को उनके इन्तिक़ाल से गहरा सदमा पहुँचा। उसी ज़माने में हज़रत उमर (रज़ि०) की बेटी हज़रत हफ़्सा (रज़ि०) के शौहर का इन्तिक़ाल हो गया और वे बेवा हो गईं।

हज़रत उमर (रज़ि०) ने हज़रत उसमान (रज़ि०) से दरख़ास्त की कि वे हज़रत हफ़्सा (रज़ि०) से निकाह कर लें, लेकिन उसमान (रज़ि०)

तैयार नहीं हुए। नबी (सल्ल०) को ख़बर हुई तो आप (सल्ल०) ने उमर (रज़ि०) से फ़रमाया, "मैं तुम्हें हफ़्सा के लिए उसमान से बेहतर शख़्स का पता देता हूँ और उसमान के लिए हफ़्सा से बेहतर रिश्ता बताता हूँ।" फिर कहा, "हफ़्सा का निकाह मुझसे कर दो और मैं अपनी बेटी की शादी उसमान से कर देता हूँ जो रुक़ैया के इन्तिक़ाल से बहुत दुखी हैं।"

हज़रत उमर (रज़ि०) फ़ौरन तैयार हो गए और हफ़्सा का निकाह नबी (सल्ल०) से हो गया। हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) का निकाह नबी (सल्ल०) ने हज़रत उसमान (रज़ि०) से कर दिया। निकाह के वक़्त नबी (सल्ल०) ने हज़रत उसमान (रज़ि०) से फ़रमाया—

> "अल्लाह ने हज़रत जिबरील (अलैहि०) के ज़रीए मुझे यह हुक्म दिया है कि मैं अपनी बेटी उम्मे-कुलसूम का निकाह उसी मह्र पर जो रुक़ैया का था, तुमसे कर दूँ।"

हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) इस निकाह के बाद छः साल ज़िन्दा रहीं। सन् 9 हिजरी शाबान के महीने में उनका इन्तिक़ाल हो गया।

हज़रत सफ़ीया-बिन्ते-अब्दुल-मुत्तलिब (रज़ि०), हज़रत उम्मे-अतीया (रज़ि०) और हज़रत असमा-बिन्ते-उमैस (रज़ि०) ने नबी (सल्ल०) की हिदायत के मुताबिक़ गुस्ल दिया। नबी (सल्ल०) ने कफ़न के लिए अपनी चादर दी और जनाज़े की नमाज़ खुद पढ़ाई। हज़रत अली (रज़ि०), हज़रत अबू-तलहा (रज़ि०), हज़रत उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि०) और हज़रत फ़ज़्ल-बिन-अब्बास (रज़ि०) क़ब्र में उतरे। हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) को जन्नतुल-बक़ी में दफ़्न किया गया। जिस वक़्त उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) को क़ब्र में उतारा गया, नबी (सल्ल०) क़ब्र के पास ही मौजूद थे और आप (सल्ल०) की आँखों से आँसू बह रहे थे।

उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) के कोई औलाद नहीं हुई।

ख़ातूने-जन्नत हज़रत फ़ातिमा ज़हरा (रज़ि०)

(1)

नाम फ़ातिमा था। नबी (सल्ल०) की चौथी और सबसे छोटी बेटी थीं। माँ हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) थीं। सय्यिदतुन-निसा-अल-आलमीन, सय्यिदतुन-निसा-अह-लिल-जन्नह, ज़हरा, बतूल, ताहिरा, मुतह्-हिरा, राज़िया, मरज़ीया और ज़ाकिया इनके मशहूर लक़ब हैं।

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) की पैदाइश के ताल्लुक़ से सीरत-निगारों में इख़्तिलाफ़ है। एक रिवायत के मुताबिक़ वे नुबूवत से पाँच साल पहले पैदा हुईं, जबकि नबी (सल्ल०) की उम्र पैंतीस साल थी। एक दूसरी रिवायत के मुताबिक़ उनकी पैदाइश नुबूवत से एक साल पहले हुई। एक रिवायत यह भी है कि वे एक नबवी में पैदा हुईं।

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) बचपन से ही बहुत सभ्य और तन्हाई पसन्द थीं। न कभी किसी खेल-कूद में हिस्सा लिया और न घर से बाहर क़दम निकाला। हमेशा अपनी माँ के साथ बैठी रहतीं। उनसे और नबी (सल्ल०) से ऐसे सवाल पूछा करतीं जिससे उनकी अक़्लमन्दी और समझदारी का सुबूत मिलता है। दुनिया के दिखावे से सख़्त नफ़रत थी। एक बार किसी रिश्तेदार की शादी थी, माँ ने फ़ातिमा (रज़ि०) के लिए क़ीमती कपड़े और गहने बनवाए। जब घर से चलने का वक़्त आया तो फ़ातिमा (रज़ि०) ने क़ीमती कपड़े और गहने पहनने से साफ़ इनकार कर दिया और सादगी से शादी में शिरकत की। बचपन ही से उनकी आदतों और तौर-तरीक़ों से अल्लाह से लगाव और दुनिया से अलगाव की ख़ूबी झलकती थी।

हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) की तालीम और तर्बियत का बहुत ख़याल रखती थीं। एक बार जब वे उन्हें तालीम दे

रही थीं तो नन्ही बच्ची ने पूछा, "अम्मा जान, अल्लाह की क़ुदरत तो हम हर पल देखते हैं, क्या अल्लाह ख़ुद नज़र नहीं आ सकते?"

हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) ने फ़रमाया, "मेरी बच्ची, अगर हम दुनिया में अच्छे काम करेंगे और अल्लाह के हुक्म पर चलेंगे तो क़ियामत के दिन अल्लाह हमसे राज़ी होगा और यही अल्लाह का दीदार होगा।"

सन् 10 नबवी में हज़रत ख़दीजा (रज़ि०) का इन्तिक़ाल हुआ तो हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) पर ग़म का पहाड़ टूट पड़ा। नबी (सल्ल०) ने फ़ातिमा (रज़ि०) की देख-भाल और तर्बियत के लिए हज़रत सौदा (रज़ि०) से निकाह कर लिया। नबी (सल्ल०) की पूरी ज़िन्दगी अल्लाह के दीन की दावत दूसरों तक पहुँचाने के लिए वक़्फ़ थी, लेकिन जब भी आप (सल्ल०) को फ़ुरसत मिलती आप (सल्ल०) फ़ातिमा (रज़ि०) के पास तशरीफ़ लाते, उन्हें तसल्ली देते और नसीहतें करते।

कभी-कभी हज़रत हफ्सा-बिन्ते-उमर (रज़ि०), हज़रत आइशा-बिन्ते-अबू-बक्र (रज़ि०), हज़रत असमा-बिन्ते-अबू-बक्र (रज़ि०) और फ़ातिमा-बिन्ते-ज़ुबैर (रज़ि०) हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के पास आ जातीं, उनसे बात-चीत करतीं और उनका दिल बहलातीं। इस्लाम के दुश्मन नबी (सल्ल०) को ख़ूब सताया करते। कभी आपके मुबारक सिर पर धूल-मिट्टी डाल देते, कभी रास्ते में काँटे बिछा देते। जब नबी (सल्ल०) घर तशरीफ़ लाते तो हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) उन्हें तसल्ली दिया करतीं। कभी-कभी वे नबी (सल्ल०) की मुसीबतों पर ख़ुद रोने लगतीं। उस वक़्त नबी (सल्ल०) उन्हें तसल्ली देते और फ़रमाते, "मेरी बच्ची, घबराओ नहीं, अल्लाह तुम्हारे बाप को अकेला नहीं छोड़ेगा।"

एक बार नबी (सल्ल०) काबा में नमाज़ पढ़ रहे थे। इस्लाम दुश्मनों को शरारत सूझी। उन्होंने ऊँट की ओझड़ी लाकर नबी (सल्ल०) की गरदन पर उस वक़्त डाल दी जब कि आप (सल्ल०) सजदे की हालत में थे। उस ज़ालिम गरोह का सरदार उक़्बा-बिन-अबी-मुईत था। किसी ने

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को बताया कि तुम्हारे बाप के साथ दुष्टों ने ऐसी हरकत की है। वे बेचैन हो गईं, दौड़ती हुई काबा पहुँचीं और नबी (सल्ल०) की गरदन से ओझड़ी हटाई। दुश्मन आस-पास खड़े हँसते और तालियाँ बजाते थे। नबी (सल्ल०) की प्यारी बेटी ने गुस्से से भरी एक नज़र उनपर डाली और कहा, "दुष्टो! अल्लाह तुम्हें इन ज़ुल्मों की सज़ा ज़रूर देगा।" अल्लाह की क़ुदरत कि ये सारे ज़ालिम कुछ ही सालों के बाद बद्र की लड़ाई में बड़ी ज़िल्लत से मारे गए।

जब मक्का के इस्लाम दुश्मनों का ज़ुल्म बहुत ज़्यादा बढ़ गया तो अल्लाह ने नबी (सल्ल०) को हिजरत का हुक्म दिया। सन् 13 नबवी में एक रात नबी (सल्ल०) हज़रत अली (रज़ि०) को अपने बिस्तर पर सुलाकर हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) के साथ मदीना की तरफ़ चल पड़े। मदीना पहुँचने के कुछ दिन बाद नबी (सल्ल०) ने अपने घरवालों को लाने के लिए अपने गुलाम राफ़े (रज़ि०) और ज़ैद-बिन-हारिसा (रज़ि०) को मक्का भेजा। उन दोनों के साथ फ़ातिमा (रज़ि०), उम्मे-कुलसूम (रज़ि०), सौदा (रज़ि०), उम्मे-ऐमन (रज़ि०) और उसामा-बिन-ज़ैद (रज़ि०) ने मदीना की तरफ़ हिजरत की। मदीना पहुँचकर हज़रत सौदा (रज़ि०), हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) और हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) नबी (सल्ल०) के पास अपने नए घर में ठहरीं।

(2)

मदीना की हिजरत के वक़्त हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) बालिग़ हो चुकी थीं। हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) ने नबी (सल्ल०) के पास फ़ातिमा (रज़ि०) के लिए पैग़ाम भेजा, लेकिन नबी (सल्ल०) ख़ामोश रहे। दूसरी रिवायत के मुताबिक़ नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "जो ख़ुदा का हुक्म होगा।" फिर हज़रत उमर (रज़ि०) ने फ़ातिमा (रज़ि०) के लिए पैग़ाम भेजा। नबी (सल्ल०) ने उन्हें भी यही जवाब दिया। कुछ दिनों के बाद नबी (सल्ल०) ने हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) का रिश्ता हज़रत अली

(रज़ि०) से कर दिया। यह रिश्ता कैसे हुआ इसके ताल्लुक़ से तीन रिवायतें हैं।

पहली रिवायत यह है कि एक दिन हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०), उमर (रज़ि०) और साद-बिन-अबी-वक़्क़ास (रज़ि०) ने आपस में चर्चा की कि हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के लिए अब तक कई पैग़ाम आए लेकिन नबी (सल्ल०) ने कोई भी मंज़ूर नहीं किया। अब अली बाक़ी हैं, वे नबी (सल्ल०) के जाँनिसार और महबूब भी हैं और चचेरे भाई भी। ऐसा लगता है कि वे ग़रीबी की वजह से पैग़ाम नहीं भेजते। क्यों न उन्हें पैग़ाम भेजने की सलाह दी जाए और ज़रूरत हो तो उनकी मदद भी की जाए। तीनों यह सलाह-मशवरा करके हज़रत अली (रज़ि०) को ढूँढने निकले। वे जंगल में अपना ऊँट चरा रहे थे। उन्होंने बड़ी मुहब्बत के साथ हज़रत अली (रज़ि०) को हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के लिए पैग़ाम भेजने की सलाह दी। हज़रत अली (रज़ि०) को अपनी ग़रीबी की वजह से पैग़ाम भेजने में झिझक हो रही थी मगर उन लोगों के समझाने से मान गए। दिल की ख़ाहिश तो उनकी भी यही थी लेकिन फ़ितरी (स्वाभाविक) शर्म पैग़ाम भेजने में रुकावट बन रही थी। अब हिम्मत करके नबी (सल्ल०) को पैग़ाम भेज दिया। नबी (सल्ल०) ने यह पैग़ाम फ़ौरन क़बूल कर लिया। फ़िर नबी (सल्ल०) ने हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) से उनकी चर्चा की। उन्होंने ख़ामोश रहकर अपनी रज़ामन्दी दे दी।

दूसरी रिवायत यह है कि अंसार की एक जमाअत ने हज़रत अली (रज़ि०) को हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के लिए पैग़ाम भेजने का मशवरा दिया। हज़रत अली (रज़ि०) नबी (सल्ल०) के पास हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) से निकाह की दरख़ास्त लेकर आए। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "अ-ह-लन व मरहबा" और फिर ख़ामोश हो गए। अंसार के लोग बाहर इन्तिज़ार कर रहे थे। हज़रत अली (रज़ि०) ने उन्हें नबी (सल्ल०) का जवाब सुनाया तो उन्होंने हज़रत अली (रज़ि०) को मुबारकबाद दी कि नबी (सल्ल०) ने आपका पैग़ाम क़बूल कर लिया है।

तीसरी रिवायत यह है कि हज़रत अली (रज़ि०) की एक दासी थी, जिसे उन्होंने आज़ाद कर दिया था। उसने एक दिन हज़रत अली (रज़ि०) से पूछा, "क्या किसी ने फ़ातिमा का पैग़ाम नबी (सल्ल०) को भेजा है?" हज़रत अली (रज़ि०) ने जवाब दिया, "मुझे मालूम नहीं।" उसने कहा, "आप पैग़ाम क्यों नहीं भेजते?" हज़रत अली (रज़ि०) ने कहा, "मेरे पास क्या है कि मैं निकाह करूँ।" उस औरत ने हज़रत अली (रज़ि०) को मजबूर करके नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में भेजा। कुछ नबी (सल्ल०) का जलाल और कुछ फ़ितरी शर्म का एहसास कि कुछ न कह सके और सिर झुकाकर ख़ामोश बैठे रहे। नबी (सल्ल०) ने ख़ुद ही उनकी तरफ़ ध्यान दिया और कहा, "अली, आज बिल्कुल ही चुपचाप हो, क्या फ़ातिमा से निकाह की दरख़ास्त लेकर आए हो?" अली (रज़ि०) ने कहा, "बेशक, ऐ अल्लाह के रसूल!" नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुम्हारे पास महर अदा करने के लिए कुछ है?" हज़रत अली (रज़ि०) ने जवाब दिया, "नहीं।" फिर नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मैंने तुम्हें जो ज़िरह (कवच) दी थी, वही महर में दे दो।"

हज़रत अली (रज़ि०) ने नबी (सल्ल०) के हुक्म के आगे सिर झुका दिया। उसके बाद हज़रत अली (सल्ल०) ज़िरह (कवच) बेचने के लिए बाज़ार की तरफ़ जा रहे थे कि रास्ते में हज़रत उसमान (रज़ि०) मिल गए। उन्होंने चार सौ अस्सी दिरहम में वह ज़िरह ख़रीद ली और फिर वही ज़िरह हज़रत अली (रज़ि०) को तोहफ़े में दे दी।

ज़िरह बेचने से जो रक़म मिली थी, हज़रत अली (रज़ि०) ने उसे नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में पेश किया। आप (सल्ल०) ने फ़रमाया, "दो तिहाई ख़ुशबू वग़ैरा पर और एक तिहाई शादी के सामान और घरदारी की चीज़ों पर ख़र्च करो।"

फिर नबी (सल्ल०) ने हज़रत अनस (रज़ि०) को हुक्म दिया कि जाकर अबू-बक्र (रज़ि०), उमर (रज़ि०), अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ (रज़ि०)

और मुहाजिरीन और अंसार को बुला लाओ। जब सब लोग जमा हो गए तो नबी (सल्ल०) मिम्बर पर तशरीफ़ ले गए और फ़रमाया, "ऐ मुहाजिरो और अंसार, अभी जिबरील (अलैहि०) मेरे पास यह ख़बर लेकर आए थे कि अल्लाह ने 'बैतुल-मामूर' में फ़ातिमा-बिन्ते-मुहम्मद का निकाह अली-बिन-अबू-तालिब से कर दिया है।

फिर नबी (सल्ल०) ने निकाह का ख़ुत्बा पढ़ा और मुस्कुराते हुए हज़रत अली (रज़ि०) से फ़रमाया—

"मैंने चार सौ मिस्क़ाल चाँदी मह्र पर फ़ातिमा को तुम्हारे निकाह में दिया, क्या तुम्हें मंज़ूर है?"

हज़रत अली (रज़ि०) ने कहा, "बेशक ऐ अल्लाह के रसूल!"

फिर नबी (सल्ल०) ने दुआ फ़रमाई—

"अल्लाह तुम्हारी परेशानियों को दूर करे और तुम्हारी कोशिशों को पसन्द फ़रमाए, तुम दोनों पर बरकतें नाज़िल करे और तुमसे पाक औलाद पैदा हो।"

फिर सबने ख़ैर और बरकत की दुआ माँगी और नबी (सल्ल०) ने एक थाल छोहारे वहाँ मौजूद लोगों पर लुटा दिए।

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के निकाह के बारे में रिवायतों में इख़्तिलाफ़ है। एक रिवायत के मुताबिक़ यह निकाह सन् 2 हिजरी सफ़र के महीने में हुआ। कुछ सीरत-निगारों का बयान है कि यह सन् 2 हिजरी मुहर्रम या रजब के महीने में हुआ। एक और रिवायत के मुताबिक़ यह निकाह सन् 3 हिजरी शव्वाल में हुआ। कुछ ने लिखा है कि यह निकाह उहुद की लड़ाई के बाद और हज़रत आइशा (रज़ि०) की विदाई के साढ़े चार महीने के बाद हुआ। लेकिन सीरत-निगारों का इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि निकाह के वक्त फ़ातिमा (रज़ि०) की उम्र पन्द्रह साल और हज़रत अली (रज़ि०) की उम्र इक्कीस साल थी।

(3)

हज़रत अली (रज़ि०) ने नबी (सल्ल०) के मकान से कुछ दूर एक मकान किराए पर ले लिया था। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) रुख़्सत होकर इसी घर की मलिका बनीं। रुख़्सती से पहले नबी (सल्ल०) ने हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को बुलाया। अपने मुबारक सीने पर उनका सिर रखा और उनके माथे को चूमा। फिर अपनी प्यारी बेटी का हाथ हज़रत अली (रज़ि०) के हाथ में देकर फ़रमाया, "ऐ अली, पैग़म्बर की बेटी तुम्हें मुबारक हो।" इसके बाद हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) से फ़रमाया, "ऐ फ़ातिमा, तुम्हारा शौहर बहुत अच्छा है।"

फिर आप (सल्ल०) ने मियाँ-बीवी की ज़िम्मेदारियाँ और हुक़ूक़ (अधिकार) बताए और खुद दरवाज़े तक विदा करने आए। दरवाज़े पर हज़रत अली (रज़ि०) के दोनों बाज़ू पकड़कर उन्हें ख़ैर और बरकत की दुआ दी। हज़रत अली (रज़ि०) और हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ऊँट पर सवार हुए। हज़रत सलमान फ़ारसी (रज़ि०) ने उसकी नकेल पकड़ी। हज़रत असमा-बिन्ते-उमैस (रज़ि०) और कुछ रिवायतों के मुताबिक़ सलमा उम्मे-राफ़े (रज़ि०) या उम्मे-ऐमन (रज़ि०) उनके साथ गईं।

नबी (सल्ल०) ने शादी के मौक़े पर जो सामान हज़रत अली (रज़ि०) और हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को दिया उसकी तफ़सील यहाँ दी गई है : (वाज़ेह रहे कि अली (रज़ि०) नबी (सल्ल०) की सरपरस्ती में थे।)

(1) एक बिस्तर मिस्री कपड़े का जिसमें ऊन भरी हुई थी।

(2) एक नक्शी तख़्त या पलंग।

(3) एक चमड़े का तकिया, जिसमें खजूर की छाल भरी हुई थी।

(4) एक मशकीज़ा (छोटी मशक)।

(5) दो मिट्टी के बरतन (या घड़े) पानी के लिए।

(6) एक चक्की।

(7) एक प्याला।

(8) दो चादरें।

(9) दो बाजूबन्द चांदी के।

(10) एक जाए नमाज़।

शादी के बाद नबी (सल्ल०) ने हज़रत अली (रज़ि०) से फ़रमाया कि वलीमे की दावत भी होनी चाहिए। मह्र अदा करने के बाद जो रक्म बच गई थी हज़रत अली (रज़ि०) ने उसी से वलीमा किया। दावत में पनीर, खजूर, जौ की रोटी और गोश्त था। हज़रत असमा (रज़ि०) से रिवयात है कि यह उस ज़माने का बेहतरीन वलीमा था।

जब हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) अपने नए घर चली गईं तो नबी (सल्ल०) उनके पास तशरीफ़ ले गए। दरवाज़े पर खड़े होकर इजाज़त माँगी फिर अन्दर तशरीफ़ ले गए। फिर हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को अपने पास बुलाया। वे शर्म से झिझकती हुई आप (सल्ल०) के पास आईं। आप (सल्ल०) ने उनसे फ़रमाया, "ऐ फ़ातिमा, मैंने तुम्हारी शादी अपने ख़ानदान के बेहतरीन शख़्स से की है।"

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) का घर नबी (सल्ल०) के घर से काफ़ी दूर था। आने-जाने में तकलीफ़ होती थी। एक दिन नबी (सल्ल०) ने हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) से फ़रमाया, "बेटी, मुझे अक्सर तुम्हें देखने के लिए आना पड़ता है, मैं चाहता हूँ कि तुम्हें अपने क़रीब बुला लूँ।" हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने कहा, "आपके पड़ोस में हारिसा-बिन-नोमान के कई मकान हैं, आप उनसे कहें तो वे कोई न कोई मकान ख़ाली कर देंगे।"

हारिसा-बिन-नोमान (रज़ि०) एक दौलतमन्द अंसारी थे और बहुत-से मकानों के मालिक थे। जब से नबी (सल्ल०) मदीना तशरीफ़ लाए थे वे अपने कई मकान नबी (सल्ल०) को पेश कर चुके थे। जब हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने नबी (सल्ल०) से हारिसा (रज़ि०) के मकान के लिए दरख़ास्त की तो नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मेरी प्यारी बेटी, हारिसा से अब कोई मकान माँगते हुए मुझे शर्म आती है क्योंकि वे पहले ही अल्लाह और अल्लाह के रसूल की ख़ुशी के लिए कई मकान दे चुके हैं।" हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ख़ामोश हो गईं।

किसी तरह यह ख़बर हज़रत हारिसा-बिन-नोमान (रज़ि०) तक पहुँची कि नबी (सल्ल०) हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को अपने क़रीब बुलाना चाहते हैं, लेकिन मकान नहीं मिल रहा है। वे फ़ौरन नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुए और कहा, "ऐ अल्लाह के रसूल! आप फ़ातिमा को किसी क़रीब के मकान में बुलाना चाहते हैं, यह मकान जो आपके पड़ोस में है, मैं ख़ाली कर देता हूँ, आप फ़ातिमा को बुला लीजिए। ऐ मेरे आक़ा, मेरी जान और माल सब आप पर क़ुर्बान है। ख़ुदा की क़सम जो चीज़ आप मुझसे ले लेंगे, मुझे उसका आपके पास रहना ज़्यादा पसन्द है, इस बात से कि वह मेरे पास रहे।" नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुम सच कहते हो, अल्लाह तुम्हें ख़ैरो-बरकत दे। इसके बाद आप (सल्ल०) ने हज़रत अली (रज़ि०) और हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को हारिसा-बिन-नोमान (रज़ि०) के मकान में बुला लिया।

(4)

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) बात-चीत, चलने-फिरने के तरीक़े और आदतों में नबी (सल्ल०) से बहुत मिलती थीं। वे परहेज़गार, साबिर और दीनदार ख़ातून थीं। घर का सारा काम-काज ख़ुद करती थीं, चक्की पीसते-पीसते हाथों मे छाले पड़ जाते थे। घर में झाड़ू देने और चूल्हा फूँकने से कपड़े मैले हो जाते थे लेकिन उनके माथे पर बल नहीं आता

था। घर के कामों के अलावा बहुत ज्यादा इबादत भी करतीं। अली (रज़ि०) बहुत ग़रीब थे। फ़ातिमा (रज़ि०) ने इस ग़रीबी में उनका पूरा साथ दिया। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के बुलन्द मर्तबा बाप अरब के ही नहीं दोनों जहान के सरदार थे, लेकिन बेटी और दामाद के घर में कई-कई वक्त चूल्हा नहीं जलता था। एक दिन दोनों मियाँ-बीवी आठ पहर (24 घंटे) से भूखे थे। हज़रत अली (रज़ि०) को मज़दूरी में एक दिरहम मिल गया। रात हो चुकी थी। एक दिरहम के जौ ख़रीद कर घर पहुँचे। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने ख़ुशी से अपने शौहर का स्वागत किया। उनसे जौ लेकर चक्की में पीसा, रोटी पकाई और हज़रत अली के सामने रख दी। जब वे खा चुके तो ख़ुद खाने बैठीं। हज़रत अली (रज़ि०) फ़रमाते हैं कि मुझे उस वक्त नबी (सल्ल०) का यह इरशाद याद आया कि "फ़ातिमा दुनिया की बेहतरीन औरत है।"

वह ज़माना इस्लाम की कामयाबी और फ़तह का ज़माना था और इस्लाम तेज़ी के साथ फैल रहा था। मदीना में कसरत से ग़नीमत के माल आने का सिलसिला जारी हो चुका था। एक दिन हज़रत अली (रज़ि०) को मालूम हुआ कि ग़नीमत के माल में कुछ लौंडियाँ आई हैं। उन्होंने हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) से कहा, "फ़ातिमा चक्की पीसते-पीसते तुम्हारे हाथों में छाले पड़ गए हैं और चूल्हा फूँकते-फूँकते तुम्हारे चेहरे का रंग बदल गया है। आज प्यारे नबी के पास ग़नीमत के माल में बहुत-सी लौंडियाँ आई हैं, जाओ और प्यारे नबी से एक कनीज़ माँग लाओ।" हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में गईं लेकिन शर्म व झिझक की वजह से कुछ कह न सकीं और थोड़ी देर के बाद वापस आ गईं। हज़रत अली (रज़ि०) से कहा, "मुझे अल्लाह के रसूल से कनीज़ माँगने की हिम्मत नहीं होती।" फिर दोनों मियाँ-बीवी नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुए, अपनी तकलीफ़ बताई और एक कनीज़ (दासी) की दरख़ास्त की। नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मैं

तुमको कोई क़ैदी ख़िदमत के लिए नहीं दे सकता। अभी मुझे सुफ्फ़ावालों के खाने-पीने का इन्तिज़ाम करना है। मैं उन लोगों को कैसे भूल जाऊँ जिन्होंने अपना घर-बार छोड़कर सिर्फ़ अल्लाह और अल्लाह के रसूल की रिज़ा की ख़ातिर यह ग़रीबी और तंगदस्ती इख़्तियार की है।" दोनों मियाँ-बीवी ख़ामोशी से वापस घर आ गए।

इब्ने-साद (रह०) और हाफ़िज़ इब्ने-हज्र-(रह०) ने बयान किया है कि रात को नबी (सल्ल०) उनके घर तशरीफ़ ले गए और फ़रमाया, "तुम मुझसे जो चीज़ चाहते हो मैं उससे बेहतर चीज़ तुम्हें बताता हूँ। हर नमाज़ के बाद दस-दस बार सुब्हानल्लाह, अलहम्दु-लिल्लाह और अल्लाहु-अकबर पढ़ा करो और सोते वक्त सुब्हानल्लाह और अलहम्दु-लिल्लाह तैंतीस-तैंतीस बार और अल्लाहु-अकबर चौंतीस बार पढ़ लिया करो। यह अमल तुम्हारा बेहतरीन ख़ादिम होगा।"

अल्लामा शिबली नोमानी (रह०) ने इस वाक़िए को इस तरह बयान किया है:

इफ़्लास से था सय्यिदा पाक का यह हाल
घर में कोई कनीज़ न कोई ग़ुलाम था,
घिस-घिस गई थीं हाथ की दोनों हथेलियाँ
चक्की के पीसने का जो दिन-रात काम था
सीने पे मशक भर के जो लाती थीं बार-बार
गो नूर से भरा था मगर नील-फ़ाम था
अट जाता था लिबासे-मुबारक ग़ुबार से
झाड़ू का मशग़ला भी हर सुबह-शाम था
आख़िर गईं जनाबे-रसूले-ख़ुदा के पास
यह भी कुछ इत्तिफ़ाक़ वहाँ इज़्ने आम था
महरम न थे जो लोग तो कुछ कर सकीं न अर्ज़
वापस गईं कि पासे-हया का मक़ाम था

फिर जब गईं दोबारा तो पूछा हुज़ूर ने
कल किस लिए तुम आईं थीं क्या ख़ास काम था
ग़ैरत यह थी कि अब भी न कुछ मुँह से कह सकीं
हैदर ने उनके मुँह से कहा जो पयाम था
इरशाद यह हुआ कि ग़रीबाने-बेवतन
जिनका कि सुफ़्फ़-ए-नबवी में क़ियाम था
मैं उनके बन्दोबस्त से फ़ारिग़ नहीं हुनूज़
हर चन्द इसमें ख़ास मुझे एहतिमाम था
जो जो मुसीबतें कि अब इनपर गुज़रती हैं
मैं इसका ज़िम्मेदार हूँ मेरा यह काम था
कुछ तुम से भी ज़्यादा मुक़द्दम था उनका हक़
जिनको कि भूख-प्यास से सोना हराम था
ख़ामोश हो के सय्यिदा-पाक रह गईं
जुरअत न कर सकीं कि अदब का मक़ाम था
यूँ की बसर हर अहले-बैते-मुतह्हर ने ज़िन्दगी
यह माजरा-ए-दुख़तरे-ख़ैरुल-अनाम था

एक बार नबी (सल्ल०) हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के घर तशरीफ़ ले गए तो देखा कि फ़ातिमा ने ऊँट की खाल का लिबास पहन रखा है और उसपर भी तेरह पेबन्द लगे हैं। आटा गूंध रही हैं और ज़बान से अल्लाह की किताब की तिलावत भी कर रही हैं। यह देख कर नबी (सल्ल०) की आँखों में आँसू आ गए और फ़रमाया, "फ़ातिमा! दुनिया की तकलीफ़ों पर सब्र करो और आख़िरत की हमेशा रहनेवाली ख़ुशियों का इन्तिज़ार करो, अल्लाह तुम्हें इसका बेहतरीन बदला देगा।"

अबू-ज़र ग़िफ़ारी (रज़ि०) कहते हैं कि एक बार नबी (सल्ल०) ने मुझे हुक्म दिया कि अली (रज़ि०) को बुला लाओ। जब मैं उनके घर गया तो देखा कि फ़ातिमा हुसैन को गोद में लिए चक्की पीस रही हैं।

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) का अकसर यह हाल होता कि दो वक्त भूखी होतीं और बच्चों को गोद में लेकर चक्की पीसा करती थीं।

एक बार हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) मस्जिदे-नबवी में तशरीफ़ लाईं और रोटी का एक टुकड़ा नबी (सल्ल०) को पेश किया। नबी (सल्ल०) ने पूछा, "यह कहाँ से आया है?" उन्होंने जवाब दिया, "अब्बा जान, थोड़े से जौ पीसकर रोटी पकाई थी, जब बच्चों को खिला रही थी तो सोचा कि आपको भी थोड़ी-सी खिला दूँ। ऐ अल्लाह के सच्चे रसूल यह रोटी तीसरे वक्त नसीब हुई है।"

नबी (सल्ल०) ने रोटी खाई और फ़रमाया, "ऐ मेरी बेटी, चार वक्त के बाद यह पहला टुकड़ा है जो तेरे बाप के मुँह में पहुँचा है।"

(5)

एक बार नबी (सल्ल०) फ़ातिमा (रज़ि०) के घर तशरीफ़ ले गए तो देखा कि दरवाज़े पर रंगीन पर्दा लगा है और फ़ातिमा (रज़ि०) के हाथ में चाँदी के दो कंगन हैं। आप (सल्ल०) यह देखकर वापस लौट गए। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) बहुत रंजीदा हो गईं और रोने लगीं। इतने में नबी (सल्ल०) के ग़ुलाम अबू-राफ़े (रज़ि०) आ गए। फ़ातिमा (रज़ि०) से रोने की वजह पूछी। पूरी बात मालूम हुई तो बोले कि नबी (सल्ल०) ने कंगन और पर्दे को नापसन्द फ़रमाया है। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने दोनों चीज़ें फ़ौरन नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में यह कहकर भेज दीं कि मैं इन्हें अल्लाह की राह में दे रही हूँ। नबी (सल्ल०) बहुत ख़ुश हुए, अपनी बेटी के लिए ख़ैर और बरकत की दुआएँ माँगीं और उन चीज़ों को बेचकर उसकी क़ीमत सुफ़्फ़ावालों की ज़रूरतों पर ख़र्च कर दी।

एक बार हज़रत अली (रज़ि०) घर आए और कुछ खाने को माँगा। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने बताया कि आज तीसरा दिन है और घर में जौ का एक दाना भी नहीं है। हज़रत अली (रज़ि०) ने कहा, "ऐ

फ़ातिमा, तुमने मुझसे कहा क्यों नहीं?" हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने जवाब दिया, "ऐ मेरे सरताज! मेरे बाप ने विदाई के वक़्त मुझे नसीहत की थी कि कभी सवाल करके आपको शर्मिन्दा न करूँ।"

एक बार दोपहर के वक़्त नबी (सल्ल०) घर से भूखे निकले। रास्ते में अबू-बक्र (रज़ि०) और हज़रत उमर (रज़ि०) मिले, वे भी भूखे थे। तीनों हज़रत अबू-अय्यूब-अंसारी (रज़ि०) के खजूरों के बाग़ में पहुँचे। उन्होंने फ़ौरन खजूरों का एक गुच्छा तोड़कर उनके सामने रख दिया। फिर एक बकरी ज़िब्ह करके गोश्त के कबाब बनाए और सालन पकवाया। जब खाना परोसा गया तो नबी (सल्ल०) ने एक रोटी पर थोड़ा-सा गोश्त रखकर फ़रमाया कि यह फ़ातिमा को भेज दो, उनके यहाँ कई दिन से खाने को कुछ नहीं है।

एक बार बनू-सुलैम क़बीले का एक कमज़ोर, बूढ़ा आदमी मुसलमान हुआ। नबी (सल्ल०) ने उसे दीन की ज़रूरी तालीम दी। फिर उससे पूछा, "तेरे पास कुछ माल भी है?" उसने कहा, "ख़ुदा की क़सम! बनू-सूलैम के तीन हज़ार आदमियों में सबसे ज़्यादा ग़रीब और कंगाल मैं ही हूँ।" नबी (सल्ल०) ने सहाबियों की तरफ़ देखा और फ़रमाया, "तुममें से कौन इसकी मदद करेगा?"

हज़रत साद-बिन उबादा (रज़ि०) उठे और कहा, "ऐ अल्लाह के रसूल मेरे पास एक ऊँटनी है, वह मैं इसे देता हूँ।"

नबी (सल्ल०) ने फिर फ़रमाया, "तुममें से कौन है जो इसका सिर ढक दे?" हज़रत अली (रज़ि०) उठे और अपना अमामा उतारकर उस ग़रीब के सिर पर रख दिया। फिर नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "कौन है जो इसके खाने का इन्तिज़ाम करे?" हज़रत सलमान फ़ारसी (रज़ि०) उस ग़रीब आदमी को साथ लेकर उसके खाने का इन्तिज़ाम करने निकले। कई घरों में पूछा लेकिन वहाँ से कुछ न मिला। फिर हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के घर का दरवाज़ा खटखटाया। हज़रत फ़ातिमा

(रज़ि०) ने पूछा, "कौन है?" सलमान फ़ारसी (रज़ि०) ने हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को सारी बात सुनाई और दरख़ास्त की, "ऐ अल्लाह के सच्चे रसूल की बेटी, इस ग़रीब के खाने का इन्तिज़ाम कर दीजिए।"

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) की आँखों में आँसू भर गए। फ़रमाया, "ख़ुदा की क़सम, हम सब तीन दिन से भूखे हैं, दोनों बच्चे भूखे सो गए हैं, लेकिन इस ग़रीब को ख़ाली हाथ न जाने दूँगी। जाओ यह मेरी चादर शमऊन यहूदी के पास ले जाओ और कहो कि फ़ातिमा-बिन्ते-मुहम्मद की यह चादर रख लो और इस ग़रीब आदमी को कुछ खाने को दे दो।"

सलमान (रज़ि०) उस ग़रीब को साथ लेकर एक यहूदी के पास गए और उसे सारा हाल सुनाया तो वह हैरान रह गया और फिर पुकार उठा, "ऐ सलमान! ख़ुदा की क़सम, ये वही लोग हैं जिनकी ख़बर तौरेत में दी गई है। गवाह रहना कि मैं फ़ातिमा के बाप मुहम्मद पर ईमान लाया।" इसके बाद कुछ अनाज हज़रत सलमान (रज़ि०) को दिया और चादर भी फ़ातिमा (रज़ि०) को वापस भेज दी। वह लेकर उनके पास पहुँचे। फ़ातिमा (रज़ि०) ने अपने हाथ से अनाज पीसा और जल्दी से उस ग़रीब के लिए रोटी पकाकर सलमान (रज़ि०) को दी। उन्होंने कहा, "इसमें से कुछ बच्चों के लिए रख लीजिए।" जवाब दिया, "जो चीज़ ख़ुदा की राह में दी जा चुकी, वह मेरे बच्चों के लिए जाइज़ नहीं।"

हज़रत सलमान (रज़ि०) रोटी लेकर नबी (सल्ल०) की ख़िदमत में हाज़िर हुए। नबी (सल्ल०) ने वह रोटी उस ग़रीब आदमी को दी और हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के घर तशरीफ़ ले गए। उनके सिर पर मुहब्बत भरा हाथ फेरा, आसमान की तरफ़ देखा और दुआ की—

"या अल्लाह, फ़ातिमा तेरी कनीज़ है, इससे राज़ी रहना।"

एक बार किसी ने फ़ातिमा (रज़ि०) से पूछा, "चालीस ऊँटों की ज़कात क्या होगी?" फ़ातिमा (रज़ि०) ने फ़रमाया, "तुम्हारे लिए सिर्फ़

एक ऊँट, और अगर मेरे पास चालीस ऊँट हों तो सारे ही अल्लाह की राह में दे दूँ।"

हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि०) से रिवायत है कि एक बार हज़रत अली (रज़ि०) ने सारी रात एक बाग़ की सिंचाई की। मज़दूरी में थोड़े-से जौ मिले। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने उनका एक हिस्सा लेकर आटा पीसा और खाना तैयार किया। ठीक खाने के वक्त एक ग़रीब ने दरवाज़ा खटखटाया और कहा, "मैं भूखा हूँ।" हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने वह सारा खाना उसे दे दिया। फिर बचे हुए अनाज का कुछ हिस्सा लेकर पीसा और खाना तैयार किया। अभी खाना पककर तैयार ही हुआ था कि एक यतीम (अनाथ) ने दरवाज़े पर आवाज़ लगाई, सब खाना उसे दे दिया। फिर बाक़ी अनाज पीस कर खाना पकाया। उसी वक्त एक मुशरिक क़ैदी ने अल्लाह की राह में खाना माँगा। सारा खाना उसे दे दिया गया। इस तरह घर के सभी लोग उस दिन भूखे रह गए। अल्लाह को उनकी यह अदा ऐसी पसन्द आई कि इस घर के बारे में यह आयत नाज़िल हुई—

> "और वे अल्लाह की राह में मिस्कीन और यतीम और क़ैदी को खाना खिलाते हैं।" (क़ुरआन, 76:8)

उहुद की लड़ाई में नबी (सल्ल०) ज़ख़्मी हो गए और नबी (सल्ल०) के शहीद होने की ख़बर मशहूर हो गई। जब यह ख़बर मदीना पहुँची तो हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) कुछ दूसरी औरतों के साथ उहुद के मैदान में पहुँची। नबी (सल्ल०) को ज़िन्दा और सलामत देखकर जान में जान आई, लेकिन मुहतरम बाप को ज़ख़्मी हालत में देखकर बहुत ग़मगीन हुईं। नबी (सल्ल०) के ज़ख़्मों को बार-बार धोती थीं, लेकिन माथे के ज़ख़्म का ख़ून न थमता था। आख़िर खजूर की चटाई जलाकर ज़ख़्म में भरी, जिससे ख़ून थम गया।

एक बार हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) बीमार पड़ीं। नबी (सल्ल०) अपने एक बूढ़े सहाबी हज़रत इमरान-बिन-हुसैन (रज़ि०) के साथ अपनी बेटी का हाल पूछने तशरीफ़ ले गए। दरवाज़े पर पहुँचकर अन्दर आने की इजाज़त माँगी। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने कहा, "तशरीफ़ लाइए।" नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "मेरे साथ इमरान-बिन-हुसैन (रज़ि०) भी हैं।" हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने जवाब दिया, "अब्बा जान, मेरे पास एक चादर के सिवा दूसरा कपड़ा नहीं कि परदा करूँ।" नबी (सल्ल०) ने अपनी चादर अन्दर फेंककर फ़रमाया, "बेटी, इससे परदा कर लो।"

इसके बाद नबी (सल्ल०) और इमरान (रज़ि०) अन्दर तशरीफ़ लाए और फ़ातिमा (रज़ि०) से उनका हाल पूछा। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने कहा, "अब्बा जान, दर्द से बेचैन हूँ और भूख ने निढाल कर रखा है, क्योंकि घर में खाने को कुछ नहीं।"

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "ऐ मेरी बेटी, सब्र कर। मैं भी आज तीन दिन से भूखा हूँ। अल्लाह से मैं जो कुछ माँगता वह मुझे ज़रूर देता लेकिन मैंने दुनिया की जगह आख़िरत को पसन्द किया है।"

फिर नबी (सल्ल०) ने अपना मुबारक हाथ बड़ी मुहब्बत से हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) की पीठ पर फेरा और फ़रमाया, "ऐ मेरी बेटी! दुनिया की मुसीबत से न घबराओ, तुम जन्नत की औरतों की सरदार हो।"

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) बहुत इबादतगुज़ार थीं। हज़रत हसन (रज़ि०) से रिवायत है कि "मैंने अपनी माँ को शाम से सुबह तक इबादत करते और अल्लाह के सामने गिड़गिड़ाते देखा लेकिन उन्होंने कभी अपनी दुआओं में अपने लिए कोई दरख़ास्त न की।"

एक बार फ़ातिमा (रज़ि०) बीमार थीं, लेकिन बीमारी की हालत में भी वे रातभर इबादत करती रहीं। जब हज़रत अली (रज़ि०) सुबह की नमाज़ के लिए मस्जिद गए तो वे नमाज़ के लिए खड़ी हो गईं, नमाज़ पढ़कर चक्की पीसने लगीं। हज़रत अली (रज़ि०) ने नमाज़ से वापस

आकर उन्हें चक्की पीसते देखा तो फ़रमाया, "ऐ अल्लाह के रसूल की बेटी, इतनी मेहनत न किया करो, थोड़ी देर आराम कर लिया करो, कहीं ज़्यादा बीमार न हो जाओ।"

फ़रमाने लगीं, "अल्लाह की इबादत और आपकी ख़िदमत बीमारी का बेहतरीन इलाज है। अगर इसमें से कोई मौत की वजह बन जाए तो इससे बढ़कर मेरी ख़ुशनसीबी और क्या होगी!"

एक बार नबी (सल्ल०) ने हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) से पूछा, "बेटी, मुसलमान औरत की ख़ूबियाँ क्या हैं?" उन्होंने कहा, "अब्बा जान, औरत को चाहिए कि अल्लाह और रसूल का हुक्म माने, औलाद से मुहब्बत करे, अपनी नज़रें नीची रखे, अपनी ख़ूबसूरती और साज-सज्जा छिपाए, न ख़ुद पराए को देखे न पराया उसको देख पाए।" नबी (सल्ल०) यह जवाब सुनकर बहुत ख़ुश हुए।

(6)

नबी (सल्ल०) को जैसे अपनी बेटी से मुहब्बत थी वैसे ही दामाद और नवासों से भी बहुत प्यार था। उनसे फ़रमाया करते, "जिन लोगों से तुम नाराज़ होगे, मैं भी उनसे नाख़ुश हूँगा। जिनसे तुम्हारी लड़ाई है, उनसे मेरी भी लड़ाई है। जिनसे तुम्हारी दोस्ती है, उनसे मेरी भी दोस्ती है।"

हज़रत अली (रज़ि०) से फ़रमाया करते, "ऐ अली! तुम दुनिया और आख़िरत में मेरे भाई हो।"

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) के बेटों हज़रत हसन और हुसैन (रज़ि०) को नबी (सल्ल०) अपने जिगर के टुकड़े समझते, उन्हें मुहब्बत से चूमते और अपने कन्धों पर उठाए फिरते थे।

(7)

नबी (सल्ल०) के इन्तिक़ाल से कुछ दिन पहले की बात है कि हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) नबी (सल्ल०) की ख़ैरियत मालूम करने हज़रत आइशा (रज़ि०) के हुजरे (कोठरी) में तशरीफ़ लाईं। नबी (सल्ल०) ने बड़ी मुहब्बत से उन्हें अपने पास बैठाया और उनके कान में आहिस्ता से कोई बात कही जिसे सुनकर वे रोने लगीं। फिर नबी (सल्ल०) ने कोई और बात उनके कान में कही जिसे सुनकर वे हँसने लगीं। जब चलने लगीं तो हज़रत आइशा (रज़ि०) ने पूछा, "ऐ फ़ातिमा! तेरे रोने और हँसने में क्या भेद था?"

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने फ़रमाया, "जो बात नबी (सल्ल०) ने छिपाकर रखी है, मैं उसे ज़ाहिर न करूँगी।"

नबी (सल्ल०) के इन्तिक़ाल के बाद एक दिन हज़रत आइशा (रज़ि०) और कुछ दूसरी रिवायतों के मुताबिक़ हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि०) ने उस दिन के रोने और हँसने का भेद पूछा तो हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने फ़रमाया, "पहली बार नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया कि पहले जिबरील (अलैहि०) साल में हमेशा एक बार क़ुरआन का दौर करते थे, इस साल दो बार किया है, इससे अन्दाज़ा होता है कि मेरी मौत का वक़्त क़रीब आ गया है।" इसपर मैं रोने लगी।

फिर नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया था, "तुम अहले-बैत में सबसे पहले मुझे मिलोगी और तुम जन्नत की औरतों की सरदार होगी।" इस बात से मुझे ख़ुशी हुई और मैं हँसने लगी।

इन्तिक़ाल से पहले जब नबी (सल्ल०) पर बार-बार बेहोशी तारी होने लगी तो हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) का दिल टुकड़े-टुकड़े हो गया। फ़रमाया, "आह, मेरे अब्बू की बेचैनी।"

नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "तुम्हारा बाप आज के बाद बेचैन न होगा।"

नबी (सल्ल०) के इन्तिक़ाल से हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) पर रंज व ग़म का पहाड़ टूट पड़ा। उन्होंने बेइख़्तियार होकर फ़रमाया : प्यारे अब्बू ने हक़ की दावत को क़बूल किया और फ़िरदौस बरीं में दाख़िल हुए। आह! जिबरील (अलैहि०) को उनके इन्तिक़ाल की ख़बर कौन पहुँचा सकता है।

फिर दुआ माँगी, "या अल्लाह, फ़ातिमा की रूह (आत्मा) को मुहम्मद (सल्ल०) की रूह के पास पहुँचा दे। या अल्लाह, मुझे रसूल (सल्ल०) के दीदार से खुश कर दे। या अल्लाह, क़ियामत के दिन मुहम्मद (सल्ल०) की शिफ़ाअत से महरूम न कर।"

कुछ रिवायतों में है कि उन्होंने नबी (सल्ल०) के इन्तिक़ाल पर एक मरसिया[1] भी कहा था। इस मरसिये में वे कहती हैं :

> "आसमान धूल से भर गया, सूरज लपेट दिया गया, दुनिया में तारीकी छा गई। नबी (सल्ल०) के बाद ज़मीन न सिर्फ़ ग़मगीन है बल्कि दुख से फट गई है। उनपर क़बीला मुज़िर के लोग और सारे यमनवाले रोते हैं। बड़े-बड़े पहाड़ और महल रोते हैं। ऐ आख़िरी रसूल (सल्ल०)! अल्लाह आप (सल्ल०) पर रहमत नाज़िल करे।"

नबी (सल्ल०) के कफ़न-दफ़न के बाद सहाबियात और सहाबा किराम (रज़ि०) ताज़ियत के लिए उनके पास आते थे लेकिन उनको किसी पहलू क़रार न था। तमाम सीरत-निगार इस बात पर मुत्तफ़िक़ हैं कि नबी (सल्ल०) के इन्तिक़ाल के बाद किसी ने फ़ातिमा (रज़ि०) को हँसते हुए नहीं देखा।

[1] किसी की मृत्यु के बाद उसके दुख में लिखी गई काव्य-रचना (शोक गीत)।

(8)

नबी (सल्ल०) के इन्तिक़ाल के बाद नबी (सल्ल०) की विरासत का मसला पेश हुआ। फ़दक एक बाग़ था जिसे नबी (सल्ल०) ने कुछ लोगों को इस शर्त पर दे रखा था कि जो पैदावार हो उसमें आधी वे रखें और आधी नबी (सल्ल०) को भेज दिया करें। नबी (सल्ल०) अपने हिस्से में से कुछ अपने घरवालों के ख़र्च के लिए रख लेते और बाक़ी ग़रीबों और मुसाफ़िरों पर ख़र्च कर देते। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को कुछ लोगों ने बताया कि फ़दक का बाग़ नबी (सल्ल०) की निजी जायदाद थी और आप उसकी वारिस हैं। इसलिए हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने मुसलमानों के पहले ख़लीफ़ा हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) के पास फ़दक की विरासत का दावा पेश किया।

हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) ने जवाब दिया, "ऐ फ़ातिमा! नबी (सल्ल०) के घरवाले मुझे अपने घरवालों से ज़्यादा अज़ीज़ हैं, लेकिन मुश्किल यह है कि नबियों का छोड़ा हुआ तरका पूरा का पूरा सदक़ा होता है और उसमें विरासत नहीं बाँटी जाती। इसलिए मैं इस जायदाद का बँटवारा नहीं कर सकता। लेकिन नबी (सल्ल०) की ज़िन्दगी में अहले-बैत (नबी सल्ल० के घरवाले) उस बाग़ से जो कुछ भी पाते थे वे अब भी उसको हासिल कर सकते हैं।"

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को इस जवाब से बहुत दुख पहुँचा और वे हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) से नाराज़ हो गईं और अपने इन्तिक़ाल तक उनसे न बोलीं। एक रिवायत में है कि वे बीमार हुईं तो हज़रत अबू-बक्र (रज़ि०) ख़ैरियत मालूम करने के लिए तशरीफ़ ले गए। हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) ने उन्हें अपने मकान के अन्दर आने की इजाज़त दी और अपनी नाराज़गी दूर कर ली।

(9)

नबी (सल्ल०) की जुदाई का सबसे ज़्यादा सदमा हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को हुआ। वे हर वक़्त उदास और ग़मगीन रहने लगीं। उनका दिल टूट चुका था। नबी (सल्ल०) की मौत के छः महीने बाद ही 3 रमज़ान सन् 11 हिजरी में उनतीस साल की उम्र में उनका इन्तिक़ाल हो गया। इन्तिक़ाल से पहले हज़रत असमा-बिन्ते-उमैस (रज़ि०) को बुलाकर फ़रमाया, "मेरा जनाज़ा ले जाते वक़्त और दफ़न के वक़्त परदे का पूरा ख़याल रखना और मेरे शौहर के सिवा किसी और से मेरे ग़ुस्ल में मदद न लेना। दफ़न के वक़्त ज़्यादा भीड़ न होने देना।"

हज़रत असमा (रज़ि०) ने कहा, "ऐ अल्लाह के रसूल की बेटी, मैंने हबशा में देखा है कि जनाज़े पर पेड़ की टहनियाँ बाँध कर एक डोली की तरह बना देते हैं और उसपर पर्दा डाल देते हैं।" फिर उन्होंने खजूर की कुछ टहनियाँ मँगवाईं और उन्हें जोड़कर और फिर उनपर कपड़ा तानकर हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को दिखाया। उन्होंने उसे पसन्द किया। इन्तिक़ाल के बाद उनका जनाज़ा इसी तरीक़े से उठा। जनाज़े में बहुत कम लोग शरीक हो सके क्योंकि हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) का इन्तिक़ाल रात के वक़्त हुआ और हज़रत अली (रज़ि०) ने वसीयत के मुताबिक़ रात ही में दफ़न किया। जनाज़े की नमाज़ हज़रत अब्बास (रज़ि०) ने पढ़ाई। हज़रत अली (रज़ि०), हज़रत अब्बास (रज़ि०) और हज़रत फ़ज़्ल-बिन- अब्बास (रज़ि०) ने क़ब्र में उतारा। दारे-अक़ील के एक कोने में दफ़न की गईं।

हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) की छः औलादें हुईं। हज़रत हसन (रज़ि०), हज़रत हुसैन (रज़ि०), हज़रत मुहसिन (रज़ि०), हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि०), रुक़ैया (रज़ि०), और हज़रत ज़ैनब (रज़ि०)।

मुहसिन (रज़ि०) और रुक़ैया (रज़ि०) का इन्तिक़ाल बचपन में ही हो गया। हज़रत हसन (रज़ि०), हज़रत हुसैन (रज़ि०), हज़रत ज़ैनब (रज़ि०) और हज़रत उम्मे-कुलसूम (रज़ि०) इस्लामी तारीख़ की मशहूर हस्तियाँ हैं। नबी (सल्ल०) की नस्ल हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) से ही बाक़ी रही।

सीरत-निगारों ने हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) की बेशुमार ख़ूबियाँ और तारीफ़ें बयान की हैं जिनमे से कुछ ये हैं :

- नबी (सल्ल०) ने हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) को "जन्नत की औरतों की सरदार" कहा है।
- नबी (सल्ल०) हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) से फ़रमाया करते थे, "ऐ फ़ातिमा, तुम और तुम्हारा शौहर और तुम्हारी औलाद मेरे साथ जन्नत में एक जगह होंगे।"
- एक बार नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया, "फ़ातिमा मेरे जिस्म का टुकड़ा है जिसने उसे ग़ुस्सा दिलाया और नाराज़ किया उसने मुझे ग़ुस्सा दिलाया और नाराज़ किया।"
- हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०), उनके शौहर और बेटों की शान में अल्लाह ने आयते-ततहीर नाज़िल की।
- हज़रत फ़ातिमा (रज़ि०) से हदीस की किताबों में अठारह हदीसें रिवायत की गई हैं। इनसे रिवायत करनेवालों में हज़रत अली (रज़ि०), हज़रत हसन (रज़ि०), हज़रत हुसैन (रज़ि०), हज़रत आइशा (रज़ि०), और हज़रत उम्मे-सलमा (रज़ि०) जैसी बुलन्द मर्तबा हस्तियाँ शामिल हैं।

